विक्रम संवाद

पाक्षिक आलेख सेवा/नि:शुल्क वितरण के लिए

सम्पादक
महाराजा विक्रमादित्य शोध पीठ
1, उदयन मार्ग, उज्जैन-456010
फोन : 0734-2521499, 0755-2660407
e-mail : mvspujjain@gmail.com
vikramadityashodhpeeth@gmail.com

इस अंक में

पृष्ठ क्र. 1-3
विक्रमादित्य के नाम और उपलब्धियाँ
भगवतीलाल राजपुरोहित

पृष्ठ क्र. 4-5
रामायणकालीन विमानों की वैज्ञानिक तकनीक
प्रमोद भार्गव

पृष्ठ क्र. 6-7
विक्रमादित्य के रत्न : वराह मिहिर
डॉ. प्रीति पांडे

पृष्ठ क्र. 8
पुस्तक चर्चा
भारतीय जनता के संघर्षों का दस्तावेज
संजीव शर्मा

विक्रमादित्य के नाम और उपलब्धियाँ

भगवतीलाल राजपुरोहित

1-विषमशील

विक्रमादित्य नामक उज्जैन के सुप्रसिद्ध राजा सम्बन्धी कहानियाँ ग्यारहवीं शती के कथासरित्सागर और बृहत्कथामंजरी के विषमशील लम्बक में प्राप्त होती हैं। तदनुसार शिवजी ने उस राजा का नाम विक्रमादित्य किया और पिता महेन्द्रादित्य राजा ने विषमशील ।

नान्मा तं विक्रमादित्यं हरोक्तेनाकरोत्पिता।
तथा विषमशीलं च महेन्द्रादित्यभूपति: ।।
कथासरित्सागर, विषमशील लम्बक

विक्रमादित्य अर्थात् जो विक्रम या पराक्रम में आदित्य के समान है और विषमशील अर्थात् विषम या असामान्य है शील या सदाचार है। जिसका अर्थात् एक ओर परमप्रतापी वीर और दूसरी ओर ऐसे शील से सम्पन्न है जो समाज में दुर्लभ या असामान्य है। कोष के अनुसार विषम के ये अर्थ भी होते हैं- अनोखा, अजीव, अनुपम। जिसके समान कोई न हो वह (वि+सम) विषम । विषमशील का अर्थ होता है- जिसके शील की उपमा कहीं नहीं है।

कथासरित्सागर और बृहत्कथामंजरी प्राकृतग्रन्थ बृहत्कथा के संस्कृत रूपान्तर हैं। बृहत्कथा की रचना प्रथम शती के गुणाढ्य की है। इसके इन दोनों भिन्न भिन्न संस्कृत रूपान्तरों में विषमशील लम्बक पाया जाता है। अत: यह लम्बक मूल बृहत्कथा में भी रहा। इससे स्पष्ट है कि ईसवीं की प्रथम शती में विक्रमादित्य का विषमशील नाम सुप्रचलित था।

भविष्यत्यत एवैष:विक्रमादित्य संज्ञक:।
तथा विषमशीलश्च नाम्ना वैषम्पतोरिषु ।।
शत्रुओं पर विषम होने से वह विषमशील था।

वल्लभदेव की सुभाषितावलि (श्लोक 1718) में यह श्लोक विषमादित्य (विक्रमादित्य) का रचा बताया गया है।

अतसी पुष्पसंकाशं खं वीक्ष्य जलदागये।
ये वियोगेन जीवन्ति न तेषां विद्यते भयम् ।।

अत: विक्रमादित्य ने अपने विषमादित्य नाम से भी काव्य रचना की थी और वह भी उसी नाम से इतनी प्रचलित थी कि उसी विषमशील रचनाकार के नाम से उसका श्लोक परम्परा में प्रसिद्ध था और वह सुभाषितावलि में भी उद्धृत हुआ। अत: कवियों में विक्रमादित्य और विषमादित्य दोनों नाम प्रचलित थे।

शूद्रक के मृच्छकटिक (6/4) में अन्य प्रकार से विषमशील शब्द का उपयोग किया गया है। उसका मूल बृहत्कथा का पूर्वोक्त विषमशील शब्द हो सकता है।

भवेत् गोष्ठीयानं न च विषमशीलैरधिगतम् ।

इसी प्रकार ग्यारहवीं शती के राजा भोज की श्रृंगारमंजरी कथानायिका की माता का नाम विषमशीला है। इस नाम का अधार भी बृहत्कथा का वह विषमशील नाम ही प्रतीत होता है। क्योंकि राजा भोज ने अपने अन्य ग्रन्थ श्रृंगार प्रकाश में बृहत्कथा के मूल प्राकृत उद्धरण दिये हैं जो अन्यत्र नहीं मिलते हैं । साथ ही बृहत्कथा के उल्लेख के साथ ही विक्रमादित्य और बृहत्कथा के कई उल्लेख उसमें पाये जाते हैं। अत: वह मूल ग्रन्थ से सुपरिचित है।

ईसवी पूर्व प्रथम शती की लिपि में एक मुद्रांक पर श्रीविषम अंकित है। अत: साहित्य और पुरातत्व दोनों से ज्ञात होता है कि विषम या विषमशील नाम लोक और शासकीय रूप से मान्य था।

यह उल्लेखनीय है कि ईसवी पूर्व के सिक्कों तथा सीलों पर संस्कृत-प्राकृत मिश्रित भाषा बहुधा मिलती है। विक्रमादित्य सम्बन्धी पुरासामग्री में भी यही स्थिति पायी जाती है।

साहसांक-

विक्रमादित्य का एक सुप्रचलित नाम साहसांक है। परवर्ती प्रचुर साहित्य संदर्भों और शिलालेखों में साहसांक नाम विक्रमादित्य के पर्याय के रूप में पाया जाता है।

वैद्य हरिचन्द साहसांक का वैद्य था और उसने चरक तंत्र की व्याख्या की थी।

साहस के अर्थ हिम्मत, दिलेरी, उग्र शौर्य आदि भी है। साहसांक का मतलब हिम्मत वाला, प्रचण्ड वीरता वाला होता है। ग्यारहवीं शताब्दी के अयोध्या शिलालेख में विक्रमादित्य के पर्याय साहसांक नाम का उल्लेख हुआ

साहसांकेन न शूद्रकेण तस्योपमानं विदधु: कवीन्द्रा: ।

वीणावासवदत्ता में सासालांछन शब्द का प्रयोग किया गया है।

यस्तस्य युद्धेमहति प्रवृत्ते पराक्रम: साहसलाञ्छन: स: ।

श्रीसाहसांक नृपतेरनवद्यवैद्यविद्यातरंगपदमद्वयमेव विभ्रत्।

यश्चन्द्रचारु चरितो हरिचन्द्रनामा

स्वव्याख्यया चरकतन्त्रमलजचकार।।

गाहासत्तसई में साहस की गाथाएँ उद्धृत हैं। राजशेखर की काव्य-मीमांसा तथा राजा भोज के सरस्वतीकण्ठाभरण में साहसांक को उद्धृत किया गया है।

1. श्रुयते चोज्जयिन्यां साहसांको नाम राजा। काव्यमीमांसा

2. काले श्रीसाहसांकस्य के न संस्कृतवादिन: । सरस्वतीकण्ठाभरण

3- शकारि- शक विजेता विक्रमादित्य की उपाधि के साहित्य शिलालेख और ज्योतिष ग्रन्थों के बार-बार उल्लेख हुए हैं। यों तो शक विजेता अनेक राजा हुए हैं परन्तु शकारि कहने मात्र से विक्रमादित्य का बोध होता है।

4- कृत- विक्रम संवत् का प्राचीन नाम कृत संवत् था। यह गुप्तकालीन और उससे प्राचीन तीसरी से पाँचवीं शताब्दी के शिलालेखों में अंकित है। कृत नामांकित कई सिक्के तथा सीलें भी प्राप्त हो चुकी हैं। कुछ सिक्कों पर कृत और विक्रम नाम एक साथ प्राप्त होते हैं। इससे प्रमाणित होता है कि कृत और विक्रम एक ही था। साहित्य में विक्रमादित्य का कृत नाम नहीं पाया जाता। अवन्ती सुन्दरी कथा के अनुसार बोधायन कृतकोटि उपवर्ष था। अत: कृतमूलक नाम पूर्वागत है। राज्य शासन की शैली से विक्रमादित्य का युग कृत (सत्य) युग था। अत: विक्रमादित्य का कृत (सार्थक) नाम अपने शासन काल में ही सुप्रचलित हो गया था।

कथासरित्सागर में कृतवर्मा का उल्लेख बताया जाता है। इससे ज्ञात होता है कि ईसवीं सदी के आरम्भ के आसपास कृत नाम होते थे। इससे ज्ञात होता है कि विक्रमादित्य का कृत नाम शासकीय रूप से मान्य था।

यह उल्लेखनीय है कि विक्रमादित्य की शकारि या साहसांक उपाधियाँ विक्रमादित्य की मुद्राओं पर प्राप्त नहीं होतीं। मुद्राओं और सीलों पर अभी तक विक्रम, विक्रमादित्य, कृत और विषम नाम ही अंकित हैं।

5- पर्वतेनद्र- एक सिक्के पर कृत, विक्रम तथा पर्वतेन्द्र (पर्वतेन्द्र) एक साथ अंकित हैं। अत: कृत विक्रम का यह पर्वतेन्द्र नाम या विरुद था। साहित्य से ज्ञात होता है कि विक्रमादित्य ने पर्वतों के प्रदेश जीत लिये थे। ज्योतिर्विदाभरण, राजतंरगिणी, नेपाल राजावली आदि से यह सिध्द होता है।

6- गोतमवीर- श्री विक्रम उजनी गोतमप्रवीर की सील प्राप्त है। इससे स्पष्ट है कि उज्जैन के विक्रम को गोतमप्रवीर भी कहते थे।

7- हरभव विक्रम- हरभव उपाधि की एक सील प्राप्त होती है। शिव की कृपा और निर्देश से उत्पन्न होने से विक्रम की यह हरभव उपाधि रही होगी।

उज्जयिन्यां सुत:शूरो महेन्द्रादित्यभूपते: ।
सच राजा मथैवांशस्तद्वभार्या चाम्बिकाश जा।
तयागृहे समुत्पाद्य कुरु कार्य दिवोकसाम् ।।
नाम्ना तं विक्रमादित्यं हरोक्तेनाकरोत् पिता।।

अत: विक्रम की उपाधि हरभव सार्थक है।

8–विक्रम रुद्र महव– एक सील पर विक्रम रुद्र मह व नाम प्राप्त होता है। रुद्र के ही निर्देश पर उत्पन्न होने से विक्रमादित्य का नाम विक्रम रुद्र उचित प्रतीत होता है। मह व के संभावित अर्थ ये हो सकते हैं।

मह के अर्थ प्रकाश और उत्सव भी होते हैं। विक्रमादित्य शिव (महाकाल) का आराधक था। घड़ावद मूर्तिलेख पर विक्रम और महाकाल यह शब्द हैं। इससे स्पष्ट है कि विक्रमादित्य बने रुद्र महाकाल का मह किया था। जिसे एक जगह रुदमह और दूसरी जगह महाकाल यह अंकित किया गया हो। यह भी संभव है कि दोनों अलग अलग यह किये। उसके चरित का प्रकाश चारों ओर चिर व्यापी रहा है। इसीलिए एक सीच पर 'देस भानेस कतस' कहा गया है। व मंगल का प्रतीक बताया गया है। वह शब्द मंगल अथवा वरुण का वाचक भी है।

9–प्राक्रम– एक सील पर प्राक्रम नाम अंकित है। यह प्र+अक्रम अर्थात् नितांत क्रम रहित है। स्थूल रूप से यह विषम (वि+सम) का बोधक है। अर्थात् जो किसी बँधायी लीक पर न चलकर अपनी तरह से चलता था। अत: यह विक्रमादित्य की उपाधि होनी चाहिए।

10– वीराकमङ्क एक सील पर उजनियि राज्ञो वीराकम अंकित है। उज्जैन का राजा वीराक्रम। वीरों पर आक्रमण करने वाला वीराकम । यह विक्रमादित्य की उपाधि हो सकती है। क्षपणक के द्वयर्थकोश में वीर का एक अर्थ विक्रम (विक्रमादित्य) कहा गया है– वीरौ विक्रम बान्ध वौ। दोनों संज्ञा हैं। वीर कहने मात्र से विक्रम का बोध हो जाता है। पंजाबी में वीर और मालवी में वीरा भाई को कहा जाता है।

11– क्री विक– एक सिक्के पर विक अंकित है। यह कृत विक्रम का बोधक है। मावल लोककथा में विक्रम स्वयं का विक्को नाम से परिचय देता है। लोक में ऐसे परिवर्तित बिगड़े संक्षिप्त नाम सर्वत्र प्रचलित रहते हैं और कभी कभी वह नाम ही अधिक प्रचलित हो जाता है।

इस एक ही सिक्के पर कृत और विक्रम नाम मिल जाने से इन दोनों नामों में अभेद सिद्ध होता है।

12– विक्रम परवतन्द्र कदस– एक सिक्के पर यह विक्रम परवतन्द्र कदस लेख अंकित है जो विक्रम पर्वतेन्द्र कृतस्य का प्राकृत रूप है। इस सिक्के से भी स्पष्ट हो जाता है कि विक्रम, कृत और पर्वतेन्द्र एक ही है। विक्रम का कृत नाम रहा और पर्वतेन्द्र उसकी उपाधि रही। ज्योतिर्विदाभरण से ज्ञात होता है कि विक्रमादित्य का पर्वतीय क्षेत्रों का भी स्वामी था।

येनाप्युग्रमहीधराग्रविषये दुर्गाण्यसह्यान्यहो
नीत्वा यानि नतीकृतास्तदधिपा दत्तानि तेषां पुन: ।
इन्द्राम्भोध्यमरश्रुमस्यरसुरक्ष्मा
भृद्गणेनाजसा श्रीमद्विक्रम
भूभृताखिलजनाम्भोजेन्दुना मण्डले।।

विक्रमादित्य ने ये राज्य जीतकर वापस लौटा दिये थे।

13– विक्रमादित्य– एक स्वर्ण सिक्के पर अंकित है राजा विक्रमादित्य उजेनिय। राजा विक्रमादित्य का पूरा नाम इस एक सिक्के पर मिला है। इस लेख से यह भी स्पष्ट है कि यह राजा एक शिलाखंड और भाप की वाग्देवी प्रतिमा की बगल में भी पूरा नाम विक्रमादित्य अंकित है। विक्रमादित्य उज्जैन का राजा था। प्राचीन पारम्परिक साहित्य और लोक परम्परा में राजा विक्रमादित्य की राजधानी उज्जैन ही पायी जाती है। विक्रमादित्य कानाम विक्रम, विक्रमार्क, विक्र, विक, विको आदि भी मिलते हैं।

कृत की तीन सीलों पर उजेनिय, उजनियि, उजेनि, उजयि नाम मिलते हैं। विक्रम के एक सिक्के पर उजनियि और एक स्वर्ण सिक्के पर उजेनिय नाम अंकित है। ये उजेनि, उजेनिय, उजनियि, उजयि, उज्जयिनी नाम के प्राकृत भाषा में विभिन्न रूप हैं जो ईसवी पूर्व प्रथम शताब्दी में लोक प्रचलित थे। तत्कालीन उज्जयिनी के सिक्कों पर उजनियि , उजेनियि, उजेनि और उजयि नाम प्राप्त होते हैं।

कृत की तीन सील पर विक्रम की एक सील पर और वीराकम की एक सील पर उज्जयिनी शब्द के विभिन्न रूप मिलते हैं। विक्रम के दो सिक्कों पर भी उज्जयिनी शब्द के रूप मिलते हैं। अत: यह कृत और विक्रम उज्जैन के थे। कृत विक्रम के दो सिक्के प्राप्त होते हैं। विक्रम और कृत दोनों के सील सिक्कों पर राजा या रागो शब्द मिलता है। अत: वह राजा था। इस प्रकार कृत विक्रम उज्जयिनी का राजा था। इन सभी सील सिक्कों पर ईसवी पूर्व की ब्राह्मी लिपि है। इसलिए उज्जैन का यह कृत विक्रम राजा ईसवी पूर्व प्रथम शती का है। इसके सील सिक्कों पर कहीं भी संवत् या वर्ष का उल्लेख नहीं है। ये उल्लेख परवर्ती अन्य लोगों के शिलालेखों में पाये जाते हैं।

14– देसभानेस– देश की आभा का स्वामी। यह उपाधि अनोखी है जिसमें राजा को देश की आभा का स्वामी कहा गया है। देश की आभा शासक से ही होती है।

रामायणकालीन विमानों की वैज्ञानिक तकनीक

प्रमोद भार्गव

रामायणकालीन संदर्भों में हम अनेक प्रकार के विमानों के बारे में पढ़ते हुए यह जिज्ञासा स्वाभाविक है कि आखिर इन विमानों के निर्माण एवं सुरक्षा की तकनीक कैसी होती होगी? इन सवालों का जवाब भी हमें अध्ययन करने पर मिलता है। जैसे वैमानिकी-शास्त्र में उड़ान भरते हुए विमानों का करतब दिखाये जाने व युद्ध के समय बचाव के उपाय भी हैं। बतौर उदाहरण यदि शत्रु ने किसी विमान पर प्रक्षेपास्त्र अथवा स्यंदन (रॉकेट) छोड़ दिया है तो उसके प्रहार से बचने के लिए विमान को त्रियग्गति (तिरछी गति) देने, कृत्रिम बादलों में छिपाने या 'तामस यंत्र' से तम: (अंधेरा) अर्थात धुआं छोड़ दो। यही नहीं विमान को नई जगह पर उतारते समय भूमिगत सावधानियां बरतने के उपाय व खतरनाक स्थिति को परखने के यंत्र भी दर्शाए गए हैं। जिससे यदि भूमिगत सुरंगें हैं तो उनकी जानकारी हासिल की जा सके। इसके लिए दूरबीन से समानता रखने वाले यंत्र 'गुहागर्भादर्श' का उल्लेख है। यदि शत्रु विमानों से चारों ओर से घेर लिया हो तो विमान में ही लगी 'द्विचक्र कीली' को चला देने का उल्लेख है। ऐसा करने से विमान 87 डिग्री की अग्नि-शक्ति निकलेगी। इसी स्थिति में विमान को गोलाकार घुमाने से शत्रु के सभी विमान नष्ट हो जाएंगे।

वैमानिक-शास्त्र में चार प्रकार के विमानों का वर्णन है। ये काल के आधार पर विभाजित हैं। इन्हें तीन श्रेणियों में रखा गया है। इसमें 'मंत्रिका' श्रेणी में वे विमान आते हैं, जो सतयुग और त्रेतायुग में मंत्र और सिद्धियों से संचालित व नियंत्रित होते थे। दूसरी श्रेणी 'तांत्रिका' है, जिसमें तंत्र शक्ति से उड़ने वाले विमानों का ब्यौरा है। इसमें तीसरी श्रेणी में कलयुग में उड़ने वाले विमानों का ब्यौरा भी है, जो इंजन (यंत्र) की ताकत से उड़ान भरते हैं। यानी भारद्वाज ऋषि ने भविष्य की उड़ान प्रौद्योगिकी क्या होगी, इसका अनुमान भी अपनी दूरदृष्टि से लगा लिया था। इन्हें कृतक विमान कहा गया है।

उड़ान भरते हुए विमानों का करतब दिखाये जाने व युद्ध के समय बचाव के उपाय भी वैमानिकी-शास्त्र में हैं। बतौर उदाहरण यदि शत्रु ने किसी विमान पर प्रक्षेपास्त्र अथवा स्यंदन (रॉकेट) छोड़ दिया है तो उसके प्रहार से बचने के लिए विमान को त्रियग्गति (तिरछी गति) देने, कृत्रिम बादलों में छिपाने या 'तामस यंत्र' से तम: (अंधेरा) अर्थात धुआं छोड़ दो। यही नहीं विमान को नई जगह पर उतारते समय भूमिगत सावधानियां बरतने के उपाय व खतरनाक स्थिति को परखने के यंत्र भी दर्शाए गए हैं। जिससे यदि भूमिगत सुरंगें हैं तो उनकी जानकारी हासिल की जा सके। इसके लिए दूरबीन से समानता रखने वाले यंत्र 'गुहागर्भादर्श' का उल्लेख है। यदि शत्रु विमानों से चारों ओर से घेर लिया हो तो विमान में ही लगी 'द्विचक्र कीली' को चला देने का उल्लेख है। ऐसा करने से विमान 87 डिग्री की अग्नि-शक्ति निकलेगी। इसी स्थिति में विमान को गोलाकार घुमाने से शत्रु के सभी विमान नष्ट हो जाएंगे।

इस शास्त्र में दूर से आते हुए विमानों को भी नष्ट करने के उपाय बताए गए हैं। विमान से 4087 प्रकार की घातक तरंगें फेंककर शत्रु विमान की तकनीक नष्ट कर दी जाती है। विमानों से ऐसी कर्कश ध्वनियां गुंजाने का भी उल्लेख है, जिसके प्रगट होने से सैनिकों के कान के पर्दे फट जाएंगे। उनका हृदयाघात भी हो सकता है। इस तकनीक को 'शब्द सघण यंत्र' कहा गया है। युद्धक विमानों के संचालन के बारे में संकेत दिए हैं कि आकाश में दौड़ते हुए विमान के नष्ट होने की आशंका होने पर सातवीं कीली अर्थात घुंडी चलाकर विमान के अंगों को छोटा-बड़ा भी किया जा सकता है। उस समय की यह तकनीक इतनी महत्वपूर्ण है कि आधुनिक वैमानिक विज्ञान भी अभी उड़ते हुए विमान को इस तरह से संकुचित अथवा विस्तारित करने में समर्थ नहीं हैं।

रामायण काल में वैमानिकी प्रौद्योगिकी विकास के चरम पर थी, यह इन तथ्यों से प्रमाणित होता है कि वैमानिक शास्त्र में विमान चालक को किन गुणों में पारंगत होना चाहिए। यह भी उल्लेख इस शास्त्र में है। इसमें प्रशिक्षित चालक (पायलट) को 32 गुणों में निपुण होना जरूरी बताया गया है। इन गुणों में कौशल चालक ही 'रहस्यग्नोधिकारी' अथवा 'व्योमयाधिकारी' कहला सकता है। चालक को विमान-चालन के समय कैसी पोशाक पहननी चाहिए, यह 'वस्त्राधिकरण' और इस दौरान

किस प्रकार का आहार ग्रहण करना चाहिए, यह 'आहाराधिकरण' अध्यायों में किए गए उल्लेख से स्पष्ट है।

राम-रावण युद्ध केवल धनुष-बाण और गदा-भाला जैसे अस्त्रों तक सीमित नहीं था। मदनमोहन शर्मा 'शाही' के तीन खण्डों में छपे बृहद उपन्यास 'लंकेश्वर' में दिए उल्लेखों से यह साफ हो जाता है कि रामायण काल में वैज्ञानिक आविष्कार चरमोत्कर्ष पर थे। राम और रावण दोनों के सेनानायकों ने भयंकर आयुधों का खुलकर प्रयोग भी किया था। लंका उस युग में सबसे संपन्न देश था। लंकाधीश रावण ने नाना प्रकार की विधाओं के पल्लवन के लिए यथोचित धन व सुविधाएं भी उपलब्ध कराईं थीं। रावण के पास लड़ाकू वायुयानों और समुद्री जलपोतों के बेड़े थे। प्रक्षेपास्त्र और ब्रह्मास्त्रों का अटूट भण्डार व इनके निर्माण में लगी अनेक वेधशालाएं थीं। दूर संचार यंत्र भी लंका में उपलब्ध थे।

ये सभी रामायणें निर्विवाद रूप से स्वीकारती हैं कि रावण के पास पुष्पक विमान था और रावण सीता को इसी विमान में बिठाकर अपहरण कर ले गया था। गंधमादन पर्वत, गृध्रों की नगरी थी। यहां के गृध्रराज भूमि, समुद्री व आकाशीय मार्ग पर भी अधिकार रखते थे। यह नगरी सम्राट संपाती के पुत्र सुपार्श्व की थी। संपाती राजा दशरथ के सखा थे। संपाती वैज्ञानिक था। उसने छोटे-बड़े वायुयानों और अंतरिक्ष यात्री की वेषभूषा का निर्माण किया था। सुपार्श्व ने ही हनुमान को लघुयान में बिठाकर समुद्र लंघन कराकर त्रिकुट पर्वत पर विमान उतारा था। त्रिकुट पर्वत लंका की सीमा परिधि में आज भी है। सुपार्श्व के पास आग्नेयास्त्र भी थे, जिनसे प्रहार कर हनुमान ने नागमाता सुरसा को परास्त किया था। इस अस्त्र के प्रयोग से समुद्र में आग लगी और नाग जाति जलकर नष्ट हो गई। त्रिकुट पर्वत के पहले मैनाक पर्वत था, जिसमें रत्नों की खानें थीं। रावण इन रत्नों का विदेश व्यापार करता था। लंका की संपन्नता का कारण भी यही खानें थीं। सुपार्श्व ने राम-रावण युद्ध में राम का साथ दिया था।

लंका में ऐसे वायुयान भी थे, जो आकाश में खड़े हो जाते थे और आलोप हो जाते थे। इनमें चालक नहीं होता था। ये स्वचालित थे। उस समय आठ प्रकार के विमान थे जो सौर ऊर्जा से संचालित होते थे। रावण पुत्र मेघनाद की निकुम्भिला वेधशाला थी। जिसमें प्रतिदिन एक दिव्य रथ अर्थात एक लड़ाकू विमान का निर्माण होता। मेघनाद के पास ऐसे विचित्र विमान भी थे जो आंख से ओझल हो जाते थे और फिर धुआं छोड़ते थे। जिससे दिन में भी अंधकार हो जाता था। यह धुआं विषाक्त गैस अथवा अश्रु गैस होती थी। ये विमान नीचे आकर बम-बारी भी करते थे।

मेघनाद की वेधशाला में 'शस्त्रयुक्त स्यंदन' (रॉकेट) का भी निर्माण होता था। मेघनाद ने युद्ध में जब इस स्यंदन को छोड़ा तो यह अंतरिक्ष की ओर बहुत ही तेज गति से बढ़ा। इन्द्र और वरुण स्यंदन शक्ति से परिचित थे। उन्होंने मताली को संकेत कर दूसरा शक्तिशाली स्यंदन छुड़ाया और मेघनाद के स्यंदन को आकाश में ही नष्ट कर दिया और इसके अवशेष को समुद्र में गिरा दिया।

लंका में यानों की व्यवस्था प्रहस्त के सुपुर्द थी। यानों में ईंधन की व्यवस्था प्रहस्त ही देखता था। लंका में सूरजमुखी पौधे के फूलों से तेल (पेट्रोल) निकाला जाता था (अमेरिका में वर्तमान में जेट्रोफा पौधे से पेट्रोल निकाला जाता है।) अब भारत में भी रतनजोत के पौधे से तेल बनाए जाने की प्रक्रिया में तेजी आई है। लंकावासी तेल शोधन में निरंतर लगे रहते थे। लड़ाकू विमानों को नष्ट करने के लिए रावण के पास भस्मलोचन जैसा वैज्ञानिक था, जिसने एक विशाल 'दर्पण यंत्र' का निर्माण किया था। इससे प्रकाशपुंज वायुयान पर छोड़ने से यान आकाश में ही नष्ट हो जाते थे। लंका से निष्कासित किये जाते वक्त विभीषण भी अपने साथ कुछ दर्पण यंत्र ले आया था। इन्हीं 'दर्पण यंत्रों' में सुधार कर अग्निवेश ने इन यंत्रो को चौखटों पर कसा और इन यंत्रों से लंका के यानों की ओर प्रकाश पुंज फेंका जिससे लंका की यान शक्ति नष्ट होती चली गई। बाद में रावण ने अग्निवेश की इस शक्ति से निपटने के लिए सद्धासुर वैज्ञानिक को नियुक्त किया।

लंका के दस हजार सैनिकों के पास 'त्रिशूल' नाम के यंत्र थे। जो दूर-दूर तक संदेश का आदान-प्रदान करते थे। संभवत: ये त्रिशूल वायर लैस ही होंगे। लंका में यांत्रिक सेतु, यांत्रिक कपाट और ऐसे चबूतरे भी थे जो बटन दबाने से ऊपर नीचे होते थे। ये चबूतरे संभवत: लिफ्ट थे।

विक्रमादित्य के रत्न : वराहमिहिर

डॉ. प्रीति पाण्डे

महाराजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में एक प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य एवं गणितज्ञ वराहमिहिर अपने आप में अद्वितीय थे। यद्यपि उनके काल को लेकर विद्वानों में संशय की स्थिति बनी रही है। किन्तु उनका जन्मस्थल उज्जैन था इसी कारण उनका सीधा तादात्म्य विक्रमादित्य से किया जा सकता है। ज्योतिर्विज्ञान के प्राचीन भारतीय विद्वानों में आचार्य वराहमिहिर का नाम अत्यन्त सम्मानपूर्वक लिया जाता है। उन्होंने गणित ज्योतिष और फलित ज्योतिष दोनों पर लिखा है। उनकी कृतियों के आधार पर कई विद्वानों का मानना है कि उनकी गणित ज्योतिष की अपेक्षा फलित ज्योतिष में अधिक रुचि थी।

वराहमिहिर का स्थान असाधारण महत्व रखता है। यह महापुरुष मालवा में उत्पन्न होकर मात्र ज्योर्तिविदों के समाज ही में नहीं, विश्व के इतिहास और संस्कृति के समाराधकों में भी अपनी ग्रन्थ-संपत्ति के द्वारा पंचभौतिक शरीर के शतसहस्राब्दियों के पूर्व त्याग देने के पश्चात् भी उनके यश: शरीर को चिरंजीवी बनाये हुये है और बनाये रहेगा।

वराहमिहिर ने अपना जन्मसंवत् 66 वि.पू. 123 ई.पू.बताया है। वृहज्जातक के उपसंहार में उन्होंने लिखा है कि अवन्ति के पास कापित्थ नामके ग्राम में आदित्यदास के घर में उन्होंने जन्म लिया कापित्थ (वर्तमान कायथा) उज्जैन से 20 कि.मी. दूर उज्जैन-मक्सी रोड पर है।

आदित्यदास तनयस्तवाप्त बोध:

कापित्थके सवितृलब्धवरप्रसाद:।

आवन्तिको मुनिमतान्यवलोक्य सम्यग्

होरां वराहमिहिरो रूचिरां चकार ।।

ऐसा माना जाता है कि उन्होंने सूर्य से आशीर्वाद प्राप्त किया था और सूर्य-पूजा में विशेष अनुराग था। इसी कारण पिता एवं स्वयं इनके नामों में सूर्य का नाम निहित था। वराहमिहिर के पुत्र पृथुसुयश भी विद्वान हुए हैं। तीनों ही उत्कृष्ट श्रेणी के ज्योतिष विज्ञानी एवं गणितज्ञ थे।

भट्टोत्पल ने वराहमिहिर को मगध के शाकद्वीपीय वंशावतस काम्पिल्य नगरी वासी होना बतलाया है किन्तु यह भ्रमपूर्ण है। यह सिद्ध हो चुका है कि उज्जैनस्थ कापित्थ ग्राम के मूल निवासी थे। आदित्यदास (पिता) से ही उन्होंने पांडित्य प्राप्त किया था। इसका प्रमाण षट्पंचाशिका के निर्माता 'पृथुयशस' ने स्वयं दिया है जो कि वराहमिहिर के पुत्र ही थे। भट्टोत्पल ने जिसे 'काम्पिल्य' समझकर कालपी आदि की कल्पना कर ली वह वास्तव में 'कापित्थक' वर्तमान कायथा, उज्जैन के निकट एक ग्राम है जो आज भी अस्तित्व में है।

वराहमिहिर के विषय में 14वीं शताब्दी में मेरुत्तुंग सूरि ने जो प्रबन्ध चिन्तामणि ग्रन्थ के कर्ता रहे हैं, ने वराहमिहिर नामक एक कथा की चर्चा की है- वराह नामक एक ब्राह्मण पुत्र था जो कि बचपन से ही शकुन ज्ञान में सश्रद्ध था। वह एकरोज वन में गया और सहज ही एक पत्थर पर बैठे-बैठे एक लग्न कुण्डली बना दी और उसे मिटाना भूल गया घर चला गया। रात को उसे यह स्मरण हुआ कि उस पत्थर पर लग्न बना रह गया है। वह निर्भीकता के साथ वन में गया और जिस पत्थर पर लग्न बना था उस पर एक सिंह बैठा था। वह डरा नहीं और पास जाकर सिंह के नीचे से हाथ डालकर पत्थर पर बनाया लग्न मिटा दिया। सहसा सिंह अलोप हो गया और वहाँ सूर्य उपस्थित हो गए। वराह की निर्भीकता और ज्योतिष के प्रति दृढ़ आस्था देखकर उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक वर माँगने को कहा। वराह ने प्रार्थना की कि मुझे समस्त ग्रह-नक्षत्र-मण्डल प्रत्यक्ष दिखला दीजिये, सूर्य अपने साथ ही वराह को आकाश-लोक में ले गये, समस्त ज्ञान देकर साल भर के बाद वराह को पुन: स्थान पर लाकर छोड़ दिया। मिहिर (सूर्य) की कृपा से ज्ञान लाभ हो जाने के कारण वराह के नाम के साथ मिहिर भी जुड़ गया और श्रीनन्द नामक नृपति के आश्रय वराहमिहिर ने 'वाराही संहिता' का निर्माण किया।

कुछ विद्वान यह भी मानते हैं कि वराह नामक पंड़ित का मिहिर पुत्र था, जिसकी विक्रम राजसभा की परम प्रतिभाशालिनी 'खना' नामक विदुषी ज्योतिविज्ञान विदा से मैत्री थी, किन्तु वराह को यह सहा नहीं था, सो खना ने अपनी जिह्वा काटकर सभा का त्याग कर दिया था।

वराहमिहिर की ज्योतिषीय ज्ञान से सन्दर्भित एक और

कथा प्रचलित है - एक समय की बात है कि वराहमिहिर के घर पुत्रोत्पन्न हुआ था, इसलिये घटिका आदि रखकर उसने पत्रिका द्वारा यह निश्चिय किया कि बालक पूर्ण शतायु है। उसके आनन्दोत्सव में जनता से लेकर श्रेष्ठ वर्ग तक के लोग तो सभी आये किन्तु वराहमिहिर का भाई जैनाचार्य भद्रबाहु नहीं आये। यह चर्चा जिनभक्त शकटार नामक मंत्री के आगे उलाहने के रूप में कही गई। तब भद्रबाहु से इस बात का मत ज्ञात हुआ कि बालक की आज से 20वें दिन मृत्यु है। यह जानकर भद्रबाहु नहीं आये, यह बात वराहमिहिर को ज्ञात हुई तो वे सावधान हो गये एवं सतर्क रहे। किन्तु 20वें दिन दरवाजे की अर्गला लकड़ी गिरने से उसकी मृत्यु हो गई। वराहमिहिर दु:खी होते हैं फिर भद्रबाहु के साथ मिलकर विघ्न शमन करते हैं।

यहाँ उल्लेखनीय है कि वराहमिहिर तो ज्योतिष थे ही किन्तु इनके पिता, पुत्र एवं इस कथानुसार भाई भी ज्योतिषाचार्य थे। किन्तु वराहमिहिर स्वयं कभी भी जैन धर्म में दीक्षित नहीं थे जैसा कि बहुत से विद्वान मानते हैं वे सूर्य से वर प्राप्त करते हैं एवं अपने ज्योतिषीय ग्रन्थों में शिव, विष्णु एवं सूर्य की स्तुति करते हैं अत: वे विक्रमादित्य के सभासद एवं नवरत्न तथा प्रसिद्ध ज्योतिषी थे जिनका जन्मस्थान उज्जैन का वर्तमान ग्राम कायथा था।

वराहमिहिर के ग्रन्थ वृहत्संहिता के 53वाँ अध्याय दृकार्गल है जिसमें भू-गर्भ के जल का ज्ञान करने पता लगाने की विधि बताई गई है। वराहमिहिर ने इस विज्ञान को दृकार्गल कहा है, जिसका अर्थ है भूमि के अन्दर के जल का अर्गला लकड़ी की छड़ी के माध्यम से निश्चय करना। वराहमिहिर के अनुसार इससे पहले इस कला के दो सुप्रसिद्ध विज्ञान मनु और सारस्वत हो चुके थे, जिनका उल्लेख वराहमिहिर ने अपने ग्रन्थ में किया था। इसके अतिरिक्त वन्नू पथ जातक कथा से यह स्पष्ट है कि यह विधि ईसा पूर्व छठी शताब्दी से यह कला विकसित हो चुकी थी। ऐसे में वराहमिहिर को ईसा की प्रथम शताब्दी पूर्व इस विधि के पुर्नसंपादक मानने में कोई झिझक नहीं होनी चाहिए।

इस प्रकार वराहमिहिर के शब्दों में 'अल्पावशिष्टेतु कृते मय नामा महासुर:।' इससे ज्ञात होता है कि सूर्य-सिद्धान्त प्रतिपादित करने वाले मयाचार्य भी वराहमिहिर से पूर्व हो चुके थे एवं 'असुर' संज्ञा से ज्ञापित इस कारण थे क्योंकि संभवत: कुछ विद्वान ऐसा मानते हैं कि ये यूनान विद्वान थे। विक्रमादित्य के काल में उज्जैन का रोम से व्यापारिक सम्बन्ध थे जिनके अन्तर्गत इस प्रकार साहित्यिक आदान-प्रदान हुआ होगा जिसका वर्णन वराहमिहिर ने अपने साहित्य में किया था।

स्वयं वराहमिहिर यूनानी शब्दों का प्रयोग अपने साहित्य में करते हुये मिलते हैं। उन्होंने अपने 'होरा-शास्त्र' को सर्वथा यूनानी सम्पर्क से अपना लिया था और ग्रन्थ में उसकी संगति लगाते हुये 'होरेत्यहोरात्र विकल्प मेके' कहकर अपने शब्द व्युत्पत्ति शास्त्र की विशेषज्ञता का भी प्रमाण उपस्थित कर दिया है। वृहज्जातक तथा अन्य साहित्यों में भी यवनों के शब्दों को उदारतापूर्वक अपनाया है। उन्होंने अनेक राशिनामों को उसी रूप में वर्णित कर ग्रन्थ में उन्हें संस्कृत में गूंथ कर अपना लिया है। ग्रीक ग्रह नामों में यथा ऑरिस के पर्याय में आर (मंगल), हिलिऑस के बदले हेलि (सूर्य), केन्ट्रोन के स्थान पर केन्द्र,और डायोमेट्रोन के स्थान पर 'जामित्र' आदि नाम दिये। भारतीयों ने सर्वदा अपनी सहानुभूतिक भावना के वशीभूत हो, जाति-देश,धर्म संप्रदाय की संकुचित भावना से ऊपर रहकर गुण-ग्राहकता का सद्भावनापूर्वक उनके उल्लेख सहित किया है। इससे अधिक और क्या प्रमाण हो सकता है। जब स्वयं वराहमिहिर यह स्वीकार करते हैं कि-

म्लेच्छाहि यवनास्तेषु सम्यक शास्त्र मिदं स्थितम् ।
ऋषिक्तेऽपि पूज्यन्ते, किं पुनर्देव विद्विज: ।।

इतिहास में स्पष्ट है कि 327 ई.पू. सिकन्दर के आक्रमण के बाद भारत के पश्चिमोत्तर भारत में यूनानी क्षत्रप राज्य करते थे और इनसे सांस्कृतिक समागम कई सौ वर्षों तक चलता रहा था। इसी का परिणाम रहा होगा कि यूनानी ज्योतिषाचार्य मयाचार्य ने सूर्य सिद्धान्त प्रतिपादित किया जिसे वराहमिहिर ने अपनी कृतियों में याद किया। वराहमिहिर ने 'सत्याचार्य' को अपने से अधिक प्रामाणिक बताये हुये 'सत्यंतु सत्योदितम्' अथवा 'सत्योक्ते-ग्रह मित्थं' आदि सम्मानपूर्वक सत्यवादी' सत्याचार्य कहा है। सत्याचार्य की कोई रचना वैसे संस्कृत में प्राप्त नहीं हुई है। केवल मद्रासी श्रीनिवास अय्यर नामक पंडित के पास 'सत्य संहिता' ग्रन्थ की तमिल लिपि की ताड़ पत्र पर लिखी हुई प्रति है उसमें अध्यायों के अंत में यही लिखा है कि सत्याचार्य रचित यह संहिता विक्रमादित्य के समय निर्मित हुई है। निश्चित रूप से ये वराहमिहिर के समकालीन विद्वान अथवा गुरु थे जिनकी विद्वता से प्रभावित होकर वराहमिहिर ने अपनी रचनाओं में प्रामाणिक बतलाया है। वराहमिहिर की रचनाओं में प्रमुखता से ज्योतिषविज्ञान, गणित एवं रस विज्ञान विषयों को समाहित किया गया है।

पुस्तक चर्चा/संजीव शर्मा

भारतीय जनता के संघर्षों का दस्तावेज

इतिहास की दृष्टि से यह किताब भारतीय समाज के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है. लेखक गणित विषय के अध्येता होने के साथ इतिहास पर भी उनका पूर्ण अधिकार है. इस नाते इस किताब में प्रियदर्शी सम्राट अशोक के परवर्ती काल में यवन आक्रांताओं के विरूद्ध भारतीय जनता के संघर्ष का विशद् वर्णन किया गया है. यहां उल्लेखनीय है कि मौर्य शासन में राजकार्य में विभिन्न जातियों, कुलों एवं जनसमूह के बीच बिना भेदभाव सम्मानित पद प्रदान किया जाता था. अशोक के काल में यवनों को भी उच्च पद प्रदान किये जाते थे. लेकिन यवन महाक्षत्रप, दिमित्र ने जब छलपूर्वक राजा सुभगसेन को सत्ताच्युत कर दिया गया तो जनविद्रोह भड़क उठा. महाक्षत्रप दिमित्र और उनकी पत्नी हेलेन दोनों ही बहुत महत्वाकांक्षी थे. छलपूर्वक कपिशा राज्य पर नियंत्रण प्राप्त कर लेने के बाद भारत भूमि पर कब्जा करने का षडयंत्र रचा गया. हालांकि उसने यह प्रमाणित करने की कोशिश की कि वह धन संग्रहण के लिए आया है जबकि उसका लक्ष्य स्थायी शासन का था. इस मंशा के साथ उसने विशाल सेना के साथ भारत भूमि की ओर आगे बढ़ा. लेकिन जिस यूक्रेतिद को बाल्हीक का क्षत्रप नियुक्त किया था, उसने ही विद्रोह का बिगुल फूंक दिया. यूक्रेतिद को बल्ख नगर के धनाढ्य भारतीय व्यापारियों ने पर्याप्त आर्थिक योगदान देकर दिमित्र के भारतभूमि पर विजय अभियान को रोक दिया. इसमें भारतीय स्त्रियों का योगदान उल्लेखनीय रहा जिससे यवनों के खिलाफ जनसंघर्ष की बीज डली. यवन भाषा के महाकवि होमर के महाकाव्य की नायिका हेलेन का ट्राय के राजकुमार पेरिस ने अगवा कर लिया था। हेलेन को मुक्त कराने के लिए दस वर्ष तक चले युद्ध में अंवति क्षेत्र के वीर योद्धाओं ने भाग लिया था जिसका विस्तार से उल्लेख मिलता है. इस प्रकार इस किताब में ऐसे अनेक अनछुये पहलुओं पर लेखक ने ध्यान आकृष्ट किया है जो इतिहास में रूचि रखने वालों के लिए उपयोगी ग्रंथ है.

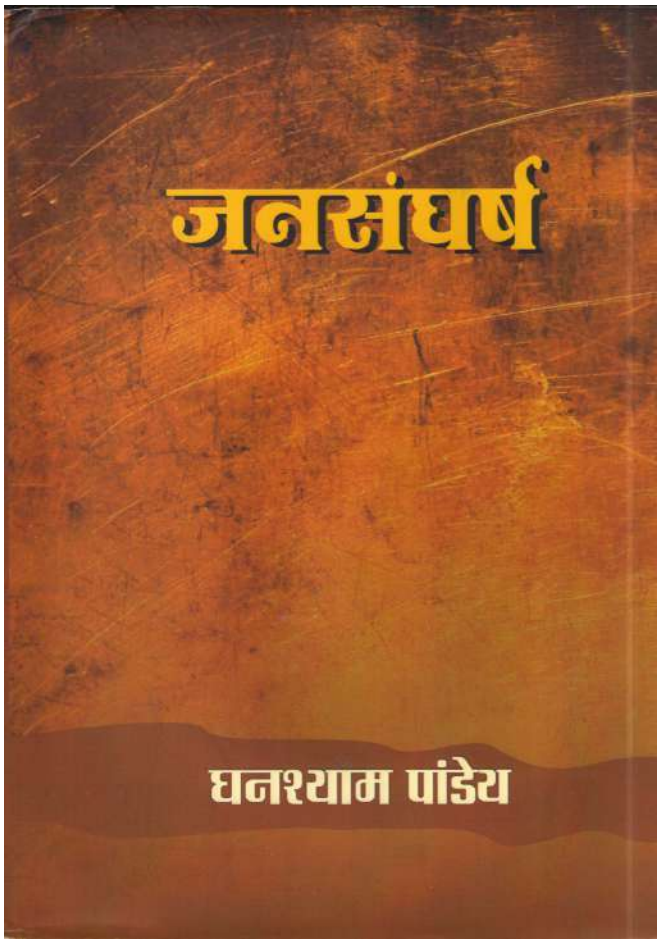

पुस्तक : जनसंघर्ष

लेखक : घनश्याम पांडेय

प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नईदिल्ली

संस्करण : प्रथम

मूल्य : 890/-

‘ उज्जयिनी से शक्तिशाली यवन सेना के पलायन का समाचार तीव्र गति से सुदूर क्षेत्रों तक फैल गया, जिससे सम्पूर्ण देश में हर्षोल्लास का ज्वार सा छा गया. भारत वर्ष के अनेक नगरों में यवनजन अनेक पीढ़ियों से बस गए थे. उज्जयिनी में उनके पराजय से उनका मन विषादग्रस्त हो गया.’

–इसी पुस्तक से

महाराजा विक्रमादित्य शोध पीठ संस्थान स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग मध्यप्रदेश शासन के लिए 1, उदयन मार्ग, उज्जैन-456010 से प्रत्येक गुरुवार प्रसारित. सम्पादक श्रीराम तिवारी. समन्वयक मनोज कुमार.

आलेख सेवा निःशुल्क वितरण के लिए. फोन : 0734-2521499 0755-2660407 e-mail : mvspujjain@gmail.com,vikramadityashodhpeeth@gmail.com